नाटक - अभिज्ञानशाकुन्तलम्

टिप्पणी I

B.A Part - II

Paper - III

प्रश्न : 8 अभिज्ञानशाकुन्तलस्य आधारे दुर्वासाशापस्य नाटकीयं महत्त्वं प्रतिपादयत ।

(वर्ग : 8)

उत्तरम् :- अभिज्ञानशाकुन्तलम् महाकवि कालिदास का चूडान्त निदर्शन है। यही नाटक का सोपान है जिस पर चढ़कर कालिदास विश्व साहित्य में सर्वोच्च आसन पाने का हकदार बने हैं। वैसे तो कालिदास ने दो महाकाव्य कुमारसंभवम् एवं ~~मेघदूतम्~~ रघुवंशम्, दो खण्डकाव्य मेघदूतम् एवं ऋतुसंहारम् तथा मालविकाग्निमित्रम्, विक्रमोर्वशीयम् एवं अभिज्ञानशाकुन्तलम् नामक तीन नाटकों की रचना की। अभिज्ञानशाकुन्तलम् में सात अंक हैं। यह नाटक कालिदास का सर्वस्व है-

"कालिदासस्य सर्वस्वम अभिज्ञानशाकुन्तलम् ।"

इन सातों अंकों में चतुर्थ अंक का विशेष महत्त्व है क्योंकि कवि ने इस अंक में दुर्वासा नामक ऋषि का प्रादुर्भाव कर नाटकीय महत्त्व को और बढ़ा दिया है। यह दुर्वासा शाप वृत्तान्त कालिदास की नवीन कल्पना है। चतुर्थ अंक के प्रारम्भ में ही दुर्वासा ऋषि के शाप का वर्णन है। विषकम्भक के रूप में कालिदास ने इस घटना को उपस्थापित किया है। शकुन्तला अपने प्रियतम दुष्यन्त की याद में खोई हुई है। दुष्यन्त स्वनाम अंकित अंगूठी शकुन्तला के हाथ में पहनाकर, उनसे पाँच दिनों का समय लेकर कि वह शीघ्र ही अपने विशेष दूत भेजकर शकुन्तला को हस्तिनापुर लाएगा। दुष्यन्त अपनी राजधानी वापस जा चुके हैं। शकुन्तला अकेली मालिनी नदी के तट पर →

आश्रम में बैठी हैं। दोनों सखियाँ अनसूया एवं प्रियंवदा फूल चुनने में व्यस्त हैं। उसी समय दुर्वासा ऋषि का प्रादुर्भाव होता है। शून्य हृदया शकुन्तला दुष्यन्त की याद में खोयी हैं। दुर्वासा के आगमन का एहसास शकुन्तला को नहीं होती है। दुर्वासा ऋषि स्वभावतः क्रोधी हैं। ऐसा लगता है कि सम्पूर्ण सृष्टि का क्रोध विधाता ने उन्हें ही सौंपा है। वे दुर्वासा क्रोधित होकर शून्यहृदया शकुन्तला को श्राप दे देते हैं कि तुम जिसकी याद में खोयी हुई हो और मुझ जैसे तपस्वी को नहीं देख रही हो, वह पागल व्यक्ति के पूर्व कही हुई बातों को याद दिलाने पर भी तुम्हारा स्मरण नहीं करेगा।

विचिन्तयन्ती यमनन्यमानसा
तपोधनं वेत्सि न मामुपस्थितम्।
स्मरिष्यति त्वां न स बोधितोऽपि सन्
कथां प्रमत्तः प्रथमं कृतामिव॥

शकुन्तला की दोनों सखियाँ इन बातों को सुन लेती हैं। वे दोनों विचार करके फूल और फल से इस ऋषि के क्रोध को शान्त करना चाहती हैं। प्रियंवदा दुर्वासा ऋषि को समझा-बुझाकर दयार्द्र बना लेती है। प्रियंवदा के यह कहने पर कि तप के प्रभाव को न जानने वाली मेरी प्यारी सखी का पहला अपराध है। पहला अपराध भगवान् भी माफ कर देते हैं। आप भगवान् स्वरूप वंदनीय हैं। अतः आप उन्हें माफ कर दीजिए। ऋषि अपने वचन को व्यर्थ नहीं बताते हुए समाधान

PANINI CLASSES

बतला देते हैं कि पहचान की वस्तु दिखाने पर शाप का अन्त हो जाएगा। यह सुनकर दोनों सखियाँ प्रसन्न हो जाती हैं। क्योंकि जब दुष्यन्त हस्तिनापुर लौट रहा था, तब शकुन्तला को एक अंगूठी पहना दिया था।

दुर्वासा शाप एक ऐसा नाटकीय तत्व एवं ऐसी योजना है जिससे आगे आने वाली घटना प्रभावित होती है। पंचम अंक में जब शकुन्तला गौतमी और ऋषिकुमारों के साथ हस्तिनापुर के राज-दरबार में उपस्थित होती है तो गौतमी एवं ऋषि-कुमार के अथक प्रयत्न के बावजूद भी राजा दुष्यन्त शकुन्तला को अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करते हैं। शाप का प्रभाव यहीं से प्रारम्भ हो जाता है जो [illegible] एवं सातवें अंक तक चलता है।

राजा दुष्यन्त [illegible] शापवश शकुन्तला को भूल चुका था। अतः शाप की समाप्ति के लिये किसी साधन से राजा का स्मृति जागृत करना आवश्यक था। इसीलिए महाकवि कालिदास ने दुर्वासा ऋषि के मुख से शाप के बाद अभिज्ञान यानी पहचान की बात भी कहलवा दी। सचमुच इस नाटक में दुर्वासा का शाप भी अत्यन्त महत्वपूर्ण कड़ी है। जो भूत को वर्तमान तथा वर्तमान को भविष्य के साथ भी मिलाने का प्रयास करते हैं। यदि दुर्वासा शाप का वृत्तान्त नहीं

PANINI CLASSES

उपस्थापित करता तो शायद ऋषियों के प्रति अनादर का भाव जस का तस रहता है। प्रेम दिवानी शकुन्तला को यह बताने का प्रयास किया गया है कि ऋषि-मुनियों का अपमान कितना भयंकारी होता है। कालिदास भारतीय सभ्यता संस्कृति को अच्छी तरह से जानता है- 'अतिथिदेवो भव' की परम्परा रही है। इसी परम्परा को कायम रखने के लिए दुर्वासा शाप की नवीन कल्पना की है। इतना ही नहीं कालिदास ने अपने कथानक में शाप तथा उसकी निवृत्ति के लिए एक मुद्रिका की नवीन योजना बनाई है। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय अंक का दुष्यन्त कामुक, भीरु और स्वार्थी प्रतीत होता है किन्तु शाप की घटना के बाद से दुष्यन्त का चरित्र उज्ज्वल हो जाता है। शाप की अवस्था में राजा के द्वारा शकुन्तला का तिरस्कृत होना स्वभाविक ही है। ऐसी स्थिति में पाठक या दर्शक उसे दोषी नहीं ठहराते है। नाटक में शृंगार के दोनों पक्ष विप्रलम्भ एवं संयोग का सन्निवेश इसी के द्वारा सम्भव हो सका है।

उपर्युक्त इन्ही सभी विशेषताओं को देखकर इस नाटक के सम्बन्ध में, आलोचकों के मुख से अनायास यह श्लोक फूट पड़ा :-

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्॥

इतना ही नहीं -

कालिदासस्य सर्वस्वम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्।

प्रश्न: ⑧ अभिज्ञानशाकुन्तले चतुर्थांके काश्यपस्य शकुन्तलां प्रति कृतम् उपदेशं सान्त्वनाम्, आशीर्वचांसि च स्वशब्देषु निरूपयत (IAS 2000) या पुत्री-प्रस्थान-दृश्यं प्रस्तुतयत।

अथवा अभिज्ञानशाकुन्तलविषयिकां "तत्रापि चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्" इतीमाम् उक्तिं स्पष्टयत (2001 I.A.S)

अथवा चतुर्थांकस्य विषयं निरूप्य तस्यांकस्य औचित्यं स्पष्टयत।

अथवा चतुर्थोऽङ्कस्य का: विशेषता: सन्ति? इति प्रतिपादयत।

अथवा चतुर्थांके वर्णितं प्रकृतेर्वर्णनम् अथवा महत्त्वम् अथवा प्रकृते: सुन्दरं मानवीकरणम् अभवत्! वर्णयत।

उत्तरम् - अभिज्ञानशाकुन्तलम् ... कालिदास की कमनीय कृति है। इस नाटक में ... अंक हैं। हरेक अंक की अपनी अलग विशेषता है। उन्हीं विशेषताओं को देख-कर आलोचकों ने ... सन्दर्भ में कहा है-

"कालिदासस्य सर्वस्वम् अभिज्ञानशाकुन्तलम्।"

सचमुच अभिज्ञानशाकुन्तलम् कालिदास के सम्पूर्ण जीवन की कमाई है। चतुर्थ अंक में महर्षि कण्व ने बेटी विदाई के समय जिस तरह उपदेश, सान्त्वना वचन एवं आशीर्वाद दिया है। वह अपने आप में अनूठा है। जिस तरह आज भी समाज में उच्च कुल में उत्पन्न पिता अपनी पुत्री को ससुराल भेजते समय उपदेश देते हैं। ठीक उसी प्रकार कण्व अपनी पुत्री से कहते हैं -

शुश्रूषस्व गुरून्कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने
भर्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मा स्म प्रतीपं गमः।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामा: कुलस्याधयः॥

अर्थात् हे पुत्री! ससुराल जाकर गुरुजनों बड़े बूढ़ों की सेवा करना, सौतों के प्रति प्रियसखी जैसा व्यवहार करना, पति के द्वारा तिरस्कृत होने पर भी पति के प्रतिकूल आचरण न करना, परिजनों, दास-दासी आदि के साथ बहुत अधिक उदार रहना तथा अपने भाग्य पर भी घमण्ड मत करना। इस प्रकार व्यवहार करने वाली युवतियाँ गृहिणीपद को सुशोभित करती है और इसके विपरीत आचरण करने वाली स्त्रियाँ अपने पितृकुल के लिए कलंक होती हैं।

यहाँ महाकवि ने भारतीय सभ्यता संस्कृति को संभाल कर रखने का प्रयास किया है। वे इस बात को जानते हैं कि स्त्री के बल पर ही परिवार उन्नत एवं विकसित होता है अतः स्त्री को परिवार में सम्मान मिलना ही चाहिए जैसे कि मनुस्मृति में कहा गया है-

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।"

शकुन्तला का लालन-पालन बाल्यकाल से कण्व ने किया, फलतः कण्व के साथ वात्सल्य प्रेम औरस पुत्री के समान है शकुन्तला पतिगृह जाते समय बार-बार कण्व से लिपट रो रही है। इस पर कण्व सान्त्वना देते हुए कहते हैं कि बेटी! तुम अपने पति की प्यारी होगी। तुम गृहिणीपद को प्राप्त करोगी! शीघ्र ही दुष्यन्त के समान पराक्रमी पुत्र को जन्म दोगी। दाम्पत्य जीवन को व्यतीत करते हुए मेरे विरह काल को तुम याद नहीं करोगी-

मम विरहजां न त्वं वत्से! शुचं गणयिष्यसि।

इस पर शकुन्तला कहती है कि मैं पुनः यहाँ कब आऊँगी कण्व अपनी पुत्री को आशीर्वाद देते हुए कहते हैं कि

PANINI CLASSES

तुम चारों समुद्रों तक फैली हुई पृथ्वी की ~~भांति~~ स्वामिनी होगी। उसके बाद अद्वितीय पुत्र को उत्पन्न करोगी। दाम्पत्य जीवन सुखमय होगा। जब पुत्र बड़ा हो जाएगा, तब राज्य-भार उसके ऊपर सौंपकर अपने पति के साथ इस आश्रम में पुनः आओगी :-

भूत्वा चिराय चतुरन्तमहीसपत्नी
दौष्यन्तिमप्रतिरथं तनयं निवेश्य।
भर्त्रा तदर्पितकुटुम्बभरेण सार्द्धं
शान्ते करिष्यसि पदं पुनराश्रमेऽस्मिन्॥

यह बात सुनकर वह शकुन्तला फूट-फूट कर रोने लगती है कि इतनी लम्बी विरह के बाद आऊँगी। आँख से आँसू उसी तरह निकल रहे हैं मानो आषाढ़ माह में बारिश हो रही हो। अतः पुत्री को सान्त्वना देते हुए कहते हैं कि

उत्पक्ष्मणोर्नयनयोरुपरुद्धवृत्तिं बाष्पं कुरु स्थिरतया विहतानुबन्धम्

पुत्री! अपने आँख के अश्रुप्रवाह को पोछ लो, पैर को स्थिर करो, क्योंकि आगे भूमि ऊबड़-खाबड़ है। तुम्हारे पैर डगमगा रहे हैं अस्मिन्नलक्षितनतोन्नतभूमिभागे मार्गे पदानि खलु ते विषमीभवन्ति।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् के चतुर्थांक में प्रकृति का यथार्थ चित्रण ~~इस अंक में~~ किया गया है शकुन्तला विदाई के समय ऐसा कारुण्य दृश्य उपस्थित होता है मानो मानव के साथ प्रकृति भी रो रहे हैं :-

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूराः।
अपसृतपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लताः॥

अर्थात् हरिणियों ने खाए हुए घास का कौर उगल दिये हैं मयूरों ने नाँचना छोड़ दिया है। लता-वृक्षों ने पीले पत्रों को गिराकर मानो आँसू बहा रहे हैं। कोयल अपनी कूक के द्वारा शकुन्तला को विदा करती है-अनुमतगमना शकुन्तला।

तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कः ~~अरु~~ इस उक्ति से ही चतुर्थ अंक का वैशिष्ट्य परिलक्षित होता है। मानव जीवन का मार्मिक एवं हृदयहारी चित्र कवि ने इसी अंक में प्रस्तुत किया है। कालिदास ने अपनी उदात्त कल्पना एवं सु-ललित पदविन्यास के सहारे इस अंक को सजाया और संवारा है। इसकी महत्ता इसी से परिलक्षित होती है कि इसमें महर्षि कण्व ने अपनी पालिता पुत्री शकुन्तला को पतिगृह भेजते समय तपस्वी होते हुए भी गृहस्थ सा व्यवहार किया है। बेटी विदाई का मार्मिक एवं हृदय विदारक दृश्य जो पाठक के समक्ष उपस्थित किया है वह विलक्षण है – "यास्यत्यद्य ... पीड्यन्ते गृहिणः कथं न तनया – विश्लेषदुःखैर्नवैः ।"

दुर्वासा शाप का वृत्तान्त भी इस अंक की सबसे बड़ी विशेषता है। ... चाहता है कि अतिथि का सम्मान न करना ... अतिथियों को आमंत्रित करना है। दुर्वासा क्रोधी ऋषि हैं। शकुन्तला उनके बातों पर ध्यान नहीं देती है अतः शाप दे देते हैं –
विचिन्तयन्ती – ... प्रथमं कृतामिव।
उपर्युक्त सारी विशेषताओं को देखकर ही यह उक्ति प्रचलित हो गई –

काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला।
तत्रापि च चतुर्थोऽङ्कस्तत्र श्लोकचतुष्टयम्॥

इस तरह हम देखते हैं कि चतुर्थांक का वैशिष्ट्य शकुन्तला की विदाई लेकर और अधिक बढ़ गया है। शकुन्तला को विदा करते समय महर्षि कण्व के मनः स्थिति का चित्र जो कालिदास ने उपस्थित किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। अतः कालिदास के सन्दर्भ में सत्य है "न कालिदासाद् अपरः कवीन्द्रः।"

आत्मदीपो भव
PANINI CLASSES
विद्ययाऽमृतमश्नुते